अहम हिदायतें

(तहरीके इस्लामी के कारकुनों के लिए)

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी

अनुवादक
एस० ख़ालिद निज़ामी

अल्लाह से ताल्लुक़

अल्लाह से ताल्लुक़ की अहमियत

सबसे पहली चीज़ जिसकी हिदायत हमेशा से नबियों और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन और उम्मत के नेक लोग हर मौक़े पर अपने साथियों को देते रहे हैं, वह यह है कि वे अल्लाह से डरें, उसकी मुहब्बत दिल में बिठाएँ और उसके साथ ताल्लुक़ बढ़ाएँ। मैंने भी उन्हीं की पैरवी में हमेशा अपने साथियों को सबसे पहले यही नसीहत की है और आगे भी जब कभी मौक़ा मिलेगा, इसी की नसीहत करता रहूँगा, क्योंकि यह वह चीज़ है जिसको हर दूसरी चीज़ पर मुक़द्दम और सबसे ऊपर होना चाहिए। अक़ीदे (धारणाओं) में 'अल्लाह पर ईमान' मुक़द्दम और सबसे ऊपर है, इबादत में अल्लाह से दिल का लगाव मुक़द्दम है, अख़लाक़ में अल्लाह का डर मुक़द्दम है, मामलों (व्यवहारों) में अल्लाह की ख़ुशी की तलब मुक़द्दम है और कुल मिलाकर हमारी सारी ज़िन्दगी ही की दुरुस्ती का दारोमदार इस बात पर है कि हमारी दौड़-धूप और कोशिशों में अल्लाह की ख़ुशी हासिल करने का मक़सद हर दूसरी मक़सद पर मुक़द्दम और प्राथमिकता प्राप्त हो। फिर ख़ास तौर से यह काम जिसके लिए हम एक जमाअत की शक्ल में उठे हैं, यह तो पूरे तौर पर अल्लाह से ताल्लुक़ ही के बल पर चल सकता है। यह उतना ही मज़बूत होगा जितना अल्लाह के साथ हमारा ताल्लुक़ मज़बूत होगा और यह उतना ही कमज़ोर होगा जितना —अल्लाह न करे— अल्लाह के साथ हमारा ताल्लुक़ कमज़ोर होगा।

ज़ाहिर बात है कि आदमी जो काम भी करने उठता है, चाहे वह

दुनिया का काम हो या दीन (धर्म) का, उसका असल मुहर्रिक (उत्प्रेरक) वह मक़सद होता है जिसके लिए वह काम करने उठा है और उसमें सरगर्मी उसी वक़्त पैदा होती है जब कि उस मक़सद के साथ आदमी की दिलचस्पी में गर्मजोशी और गहराई हो । नफ़्स और मन की ग़लत इच्छाओं की पूर्ति के लिए काम करनेवाला ख़ुदग़र्ज़ी (स्वार्थपरता) के बिना नफ़्सपरस्ती नहीं कर सकता । नफ़्स की मुहब्बत में जितनी शिद्दत होती है, उतनी ही सरगर्मी के साथ वह उसकी ख़िदमत करता है । औलाद के लिए काम करनेवाला औलाद की मुहब्बत में दीवाना होता है, तब ही वह अपने ऐशो आराम को औलाद की भलाई पर क़ुरबान करता है और अपनी दुनिया ही नहीं, अपनी आख़िरत तक इस मक़सद के लिए ख़तरे में डाल देता है कि उसके बच्चे ज़्यादा से ज़्यादा खुशहाल रहें । क़ौम या वतन के लिए काम करनेवाला देश और क़ौम के इश्क़ व मुहब्बत में गिरफ़्तार होता है, तब ही वह क़ौम और देश की आज़ादी, हिफ़ाज़त और बरतरी की फ़िक्र में माल व दौलत और हर प्रकार नुक़सान उठाता है । क़ैद व बंद की सख़्तियाँ झेलता है, दिन-रात मेहनतें करता है और अपनी जान तक क़ुरबान कर देता है । अब अगर हम यह काम न अपने नफ़्स के लिए कर रहे हैं, न कोई ख़ानदानी हित इसका मुहर्रिक है, न कोई मुल्की या क़ौमी मफ़ाद (लाभ) इसमें हमारे सामने है, बल्कि सिर्फ़ एक अल्लाह को राज़ी करना हमारा मक़सद है और उसी का काम समझकर हमने इसे अपनाया है, तो आप ख़ुद समझ सकते हैं कि जब तक अल्लाह ही से हमारा ताल्लुक़ गहरा और मज़बूत न हो, यह काम भी नहीं चल सकता । इसमें सरगर्मी और तेज़ी आ सकती है तो उसी वक़्त जबकि हमारी सारी दिलचस्पियाँ अल्लाह के कलिमे को बुलंद करने की कोशिश में लग जाएँ । इस काम में जो लोग शामिल हों उनके लिए सिर्फ़ इतनी बात काफ़ी नहीं

है कि उनका ताल्लुक़ अल्लाह से भी हो, बल्कि उनका ताल्लुक़ अल्लाह से ही होना चाहिए । यह ताल्लुक़ ताल्लुक़ात में से एक ताल्लुक़ नहीं, बल्कि एक ही असली और हक़ीक़ी ताल्लुक़ होना चाहिए और उन्हें हर वक़्त यह फ़िक्र रहनी चाहिए कि अल्लाह से उनका ताल्लुक़ घटे नहीं, बल्कि दिन प्रति दिन ज़्यादा बढ़ता और गहरा होता चला जाए ।

इस मामले में हमारे बीच दो राएँ नहीं कि अल्लाह से ताल्लुक़ ही हमारे इस काम की जान है । ख़ुदा का शुक्र है कि जमाअत का कोई रफ़ीक़ इसकी अहमियत के एहसास से ग़ाफ़िल नहीं है । अलबत्ता जो सवालात अकसर लोगों को परेशान रखते हैं, वे ये हैं कि अल्लाह से ताल्लुक़ का ठीक मतलब क्या है? इसके पैदा करने और बढ़ाने का तरीक़ा क्या है और आख़िर हम किस तरह यह मालूम करें कि हमारा ताल्लुक़ सचमुच अल्लाह से है या नहीं; और है तो कितना? इन सवालों का कोई वाज़ेह जवाब मालूम न होने की वजह से मैंने अकसर यह महसूस किया है कि लोग मानो अपने आपको एक बेनिशान रेगिस्तान में पा रहे हैं, जहाँ कुछ पता नहीं चलता कि उनकी मंज़िले मक़सूद ठीक किस सिम्त (दिशा) में है और कोई अंदाज़ा नहीं होता कि उन्होंने कितना रास्ता तय किया और अब किस मरहले में हैं और आगे कितने मरहले बाक़ी हैं । इसी वजह से कभी-कभी हमारा कोई रफ़ीक़ ग़ैर-वाज़ेह ख़यालों में गुम होने लगता है, कोई ऐसे तरीक़ों की तरफ़ झुकने लगता है जो असल मक़सद तक नहीं पहुँचते । किसी के लिए मक़सद से क़रीब का ताल्लुक़ और दूर का ताल्लुक़ रखनेवाली चीज़ों में फ़र्क़ करना मुशकिल हो रहा है और किसी पर हैरत की हालत तारी है । इसलिए आज मैं सिर्फ़ अल्लाह से ताल्लुक़ की नसीहत ही पर बस नहीं करूँगा, बल्कि अपने इल्म की हद तक इन सवालों का भी एक वाज़ेह जवाब देने की कोशिश करूँगा ।

अल्लाह से ताल्लुक़ का मतलब

अल्लाह से ताल्लुक़ का मतलब जैसा कि क़ुरआन मजीद में बताया गया है, यह है की आदमी का जीना और मरना, उसकी इबादतें और क़ुरबानियाँ सबकी सब अल्लाह के लिए हों—

"बेशक मेरी नमाज़ और मेरी क़ुरबानी और मेरा जीना और मरना अल्लाह ही के लिए है जो सारे जहान का रब है।"

(क़ुरआन, 6:162)

और वह पूरी तरह यकसू होकर अपने दीन को बिलकुल अल्लाह के लिए ख़ालिस करके उसकी बंदगी करे—

"और उन्हें हुक्म बस इसी का दिया गया था कि अल्लाह की इबादत करें, दीन को उसी के लिए ख़ालिस करके, यकसू होकर।" (क़ुरआन, 98: 5)

नबी (सल्ल॰) ने अलग-अलग मौक़ों पर अपने बयानों में इस ताल्लुक़ की ऐसी तशरीह (व्याख्या) कर दी है कि उसके मानी और मतलब खुलकर सामने आ गए हैं और कोई चीज़ छिपी नहीं रह गई है। नबी (सल्ल॰) की हिदायतों पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि अल्लाह से ताल्लुक़ होने के मानी हैं—

"खुले और छिपे हर काम में अल्लाह का डर महसूस करना।"

"अपने ज़रियों और संसाधनों के मुक़ाबिले में तेरा भरोसा अल्लाह की क़ुदरत पर ज़्यादा हो।"

"आदमी अल्लाह को राज़ी करने के लिए लोगों को नाराज़ कर ले।"

जिसके बिलकुल उल्टी हालत यह है कि "आदमी लोगों को राज़ी करने के लिए अल्लाह की नाराज़ी मोल ले।"

फिर जब यह ताल्लुक़ बढ़ते-बढ़ते इस हद को पहुँच जाए कि आदमी की मुहब्बत और दुश्मनी और उसका देना और रोकना जो कुछ भी हो अल्लाह के लिए और अल्लाह की ख़ातिर हो और नफ़्सानी रग़बत और नफ़रत की लाग उसके साथ न लगी रहे, तो इसके माने ये हैं कि उसने अल्लाह से ताल्लुक़ को मुकम्मल कर लिया—

> "जिसने अल्लाह ही के लिए मुहब्बत की और अल्लाह ही के लिए नफ़रत की और अल्लाह ही के लिए दिया और अल्लाह ही के लिए रोक रखा, तो उसने ईमान मुकम्मल कर लिया।"
>
> (हदीस)

फिर यह जो आप हर दिन-रात में अपनी दुआ-ए-कुनूत में पढ़ते हैं, उसका एक-एक लफ़्ज़ (शब्द) उस ताल्लुक़ की निशानदेही करता है जो आपका अल्लाह के साथ होना चाहिए। उसके अलफ़ाज़ पर ग़ौर कीजिए और देखते जाइए कि आप हर रात अपने अल्लाह के साथ किस तरह का ताल्लुक़ रखने का इक़रार किया करते हैं—

> "ऐ अल्लाह! हम तुझसे मदद माँगते हैं, तुझसे रहनुमाई चाहते हैं, तुझसे माफ़ी चाहते हैं और तुझपर ईमान लाते हैं, तेरे ही ऊपर भरोसा रखते हैं, और सारी तारीफ़ें तेरे ही लिए मख़सूस हैं। हम तेरे शुक्रगुज़ार हैं, तेरी नेमत का इनकार करनेवाले नहीं हैं। हम हर उस शख़्स को छोड़ देंगे जो तेरी नाफ़रमानी करे। ऐ अल्लाह! हम तेरी बंदगी करते हैं, तेरे ही लिए नमाज़ पढ़ते हैं और सजदा करते हैं, और हमारी सारी दौड़-धूप तेरी तरफ़ ही है। हम तेरी रहमत के उम्मीदवार हैं और तेरे अज़ाब से डरते हैं, यक़ीनन तेरा सख़्त अज़ाब उन लोगों को पहुँचनेवाला है जो इनकार करनेवाले हैं।"

फिर अल्लाह से इसी ताल्लुक़ की तसवीर उस दुआ में पाई जाती है जो नबी (सल्ल०) रात को तहज्जुद के लिए उठते वक़्त पढ़ा करते थे। उसमें आप (सल्ल०) अल्लाह से अर्ज़ करते थे –

"ऐ अल्लाह! मैं तेरा ही फ़रमाँबरदार हुआ और तुझी पर ईमान लाया और तेरे ही ऊपर मैंने भरोसा किया और तेरी ही तरफ़ मैंने रुजू किया और तेरी वजह से मैं लड़ा और तेरे ही सामने अपना मक़द्दमा लाया।"

अल्लाह से ताल्लुक़ बढ़ाने का तरीक़ा

यह है सही नौइयत उस ताल्लुक़ की जो एक मोमिन को अल्लाह से होना चाहिए। अब देखना चाहिए कि इस ताल्लुक़ को पैदा करने और बढ़ाने का तरीक़ा क्या है?

इसको पैदा करने की सूरत सिर्फ़ एक है और वह यह कि आदमी सच्चे दिल से एक अल्लाह, जिसका कोई शरीक नहीं, को अपना और सारी कायनात का मालिक, माबूद और हाकिम तसलीम करे, इलाहियत की सारी सिफ़ात और हुक़ूक़ और इख़तियारों को अल्लाह के लिए मख़सूस मान ले और अपने (दिल) को शिर्क से बिलकुल पाक कर दे। यह काम जब आदमी कर लेता है तो अल्लाह से उसका ताल्लुक़ क़ायम हो जाता है।

रहा इस ताल्लुक़ का बढ़ना और परवान चढ़ना तो वह दो तरीक़ों ही से हो सकता है। एक सोचने-समझने का तरीक़ा और दूसरा अमल का तरीक़ा।

सोचने-समझने के तरीक़े से अल्लाह के साथ ताल्लुक़ बढ़ाने की सूरत यह है कि आप क़ुरआन मजीद और सही हदीसों की मदद से उन

रिश्तों को तफ़सील के साथ और ज़्यादा से ज़्यादा वज़ाहत के साथ समझें जो आपके और खुदा के बीच फ़ितरी तौर से हैं और उन्हें अमल में भी होना चाहिए। इन रिश्तों का ठीक-ठीक एहसास और बोध और ज़ेहन में उनका मौजूद रहना सिर्फ़ इसी तरीक़े से मुमकिन है कि आप कुरआन और हदीस को समझकर पढ़ें और बार-बार पढ़ते रहें और उनकी रोशनी में जो-जो रिश्ते आपके और खुदा के बीच मालूम हों, उनपर सोच-विचार करके और अपनी हालत का जाइज़ा लेकर देखते रहें कि उनमें से किस-किस रिश्ते को आपने अमली तौर पर क़ायम कर रखा है, कहाँ तक उसके तक़ाज़े आप पूरे कर रहे हैं और किस-किस पहलू में क्या-क्या कमी आप महसूस करते हैं। यह एहसास और ज़ेहन में याद ताज़ा रखने का अमल जितना ही ज़्यादा बढ़ेगा; इनशा-अल्लाह; उतना ही ज़्यादा अल्लाह से आपका ताल्लुक़ बढ़ेगा।

मिसाल के तौर पर एक रिश्ता आपके और अल्लाह के बीच यह है कि आप बन्दे हैं और वह माबूद है आपका। दूसरा रिश्ता यह है कि आप ज़मीन पर उसके ख़लीफ़ा हैं और उसने अनगिनत अमानतें आपके सुपुर्द कर रखी हैं। तीसरा रिश्ता यह है कि आप ईमान लाकर उसके साथ एक ख़रीद-फ़रोख़्त का मुआहिदा तय कर चुके हैं जिसके मुताबिक़ आपने अपनी जान व माल उसके हाथ बेची है और उसने जन्नत के वादे पर ख़रीदी है। चौथा रिश्ता आपके और उसके बीच यह है कि आप उसके सामने जवाबदेह हैं और वह आपका हिसाब सिर्फ़ आपके ज़ाहिरी लिहाज़ से लेनेवाला नहीं है, बल्कि आपकी सारी हरकतों और तौर-तरीक़ों बल्कि आपकी नीयतों और इरादों तक का रिकार्ड उसके पास महफ़ूज़ हो रहा है। ग़रज़ यह और दूसरे बहुत से रिश्ते ऐसे हैं जो आपके और अल्लाह के बीच मौजूद हैं। बस इन्हीं रिश्तों को समझने, महसूस करने, याद रखने

और उनके तक़ाज़े पूरे करने पर अल्लाह तआला से आपके ताल्लुक़ के बढ़ने और क़रीबतर होने का दारोमदार है । आप जितने इनसे लापरवाह होंगे अल्लाह से आपका ताल्लुक़ उतना ही कमज़ोर होगा और जितने ज़्यादा इनसे ख़बरदार और इनकी तरफ़ तवज्जोह देते रहेंगे उतना ही ज़्यादा ताल्लुक़ गहरा और मज़बूत होगा ।

लेकिन सोच-विचार करने के इस तरीक़े से उस वक़्त तक कोई नतीजा नहीं निकल सकता, बल्कि ज़्यादा देर तक निबाहा भी नहीं जा सकता, जब तक कि अमली तरीक़े से उसको मदद और क़ुव्वत न पहुँचाई जाए और वह अमली तरीक़ा है अल्लाह के हुक्मों की सच्चे दिल से पैरवी व इताअत करना और हर उस काम में जान लड़ाकर दौड़-धूप करना जिसके बारे में आदमी को मालूम हो जाए कि उसमें अल्लाह की ख़ुशी है। अल्लाह के हुकमों की सच्चे दिल से इताअत का मतलब यह है कि जिन कामों का अल्लाह ने हुक्म दिया है उनको, बेदिली से नहीं, बल्कि अपने दिल की चाहत और शौक़ के साथ छिपे और खुले अंजाम दें और इसमें दुनिया के किसी फ़ायदे को नहीं, बल्कि सिर्फ़ अल्लाह की ख़ुशी सामने रखें और जिन कामों से अल्लाह ने रोका है उनसे दिली नफ़रत और नापसन्दीदगी के साथ छिपे-खुले दूर रहें और इस दूर रहने का सबब दुनिया के नुक़सानों का ख़ौफ़ नहीं, बल्कि अल्लाह के ग़ज़ब का ख़ौफ़ हो । यह तर्ज़े अमल आपको परहेज़गार बना देगा और इसके बाद दूसरा तर्ज़े अमल आपको एहसान की मंज़िल पर पहुँचा देगा । यानी यह कि आप दुनिया में हर उस भलाई को फैलाने की कोशिश करें जिसे अल्लाह पसन्द करता है और हर उस बुराई को दबाने की कोशिश करें जिसे अल्लाह नापसन्द करता है । और इस कोशिश में जान, माल, वक़्त, मेहनत और दिल व दिमाग़ की सलाहियतें, ग़रज़ कि किसी चीज़ के क़ुरबान करने में

कंजूसी से काम न लें। फिर इस राह में जो कुरबानी आप दें उसपर कोई फ़ख़्र या बड़ाई का एहसास आपके दिल में पैदा न हो, न यह ख़याल कभी आपके दिल में आए कि आपने किसी पर एहसान किया है, बल्कि बड़ी से बड़ी कुरबानी करके भी आप यही समझते रहें कि आपके पैदा करनेवाले का जो हक़ आपपर था वह फिर भी अदा नहीं हो सका है।

अल्लाह से ताल्लुक़ बढ़ाने के तरीक़े

इस तरीक़े को अपनाना हक़ीक़त में कोई आसान काम नहीं है। यह एक बहुत ही मुशकिल घाटी है, जिसपर चढ़ने के लिए बड़ी ताक़त चाहिए और यह ताक़त जिन तदबीरों से आदमी के अन्दर पैदा हो सकती है वे ये हैं —

1. नमाज़

नमाज़ न सिर्फ़ फ़र्ज़ और सुन्नत बल्कि जितनी पढ़ सकते हों नफ़्लें भी पढ़ें। मगर यह याद रखिए कि नफ़्लों को ज़्यादा से ज़्यादा छिपकर अदा करना चाहिए, ताकि अल्लाह से आपका निजी ताल्लुक़ फले-फूले और ख़ुलूस की सिफ़त आपमें पैदा हो। नफ़्ल पढ़ने का और ख़ास तौर से तहज्जुद पढ़ने का एलान और इज़हार कभी-कभी एक ख़तरनाक क़िस्म का गुरूर इनसान में पैदा कर देता है, जो मोमिन के नफ़्स के लिए बड़ा ही तबाहकुन है और यही अंदेशे दूसरी तरह के नफ़्लों, सदक़ों और ज़िक्रों के इज़हार और एलान में भी पाए जाते हैं।

2. अल्लाह का ज़िक्र

अल्लाह का ज़िक्र ज़िंदगी की सभी हालतों में जारी रहना चाहिए।

इसके वे तरीक़े सही नहीं हैं जो बाद के ज़माने में सूफ़ियों के मुख़्तलिफ़ गिरोहों ने खुद ईजाद किए या दूसरों से लिए, बल्कि बेहतरीन और सबसे अच्छा तरीक़ा वह है जो नबी (सल्ल॰) ने अपनाया और अपने सहाबा किराम (रज़ि॰) को सिखाया । आप प्यारे नबी (सल्ल॰) के सिखाए हुए ज़िक्र-अज़कार और दुआओं में से जितनी भी याद कर सकें कर लें । मगर अलफ़ाज़ के साथ उनके मानी भी दिल और दिमाग़ में बैठा लीजिए और उनके मानी और मतलब को ज़ेहन में हाज़िर रखने के साथ-साथ उनको समय-समय पर पढ़ते रहा कीजिए । यह अल्लाह की याद ताज़ा रखने और अल्लाह की तरफ़ दिल की तवज्जोह जमाए रखने का एक बहुत ही असरदार ज़रिया है ।

3. रोज़ा

रोज़ा न सिर्फ़ फ़र्ज़ बल्कि नफ़्ल भी रखें । नफ़्ल रोज़ों की बेहतरीन और सबसे मुनासिब सूरत यह है कि हर महीने तीन दिन के रोज़े पाबंदी से रखें और उन दिनों में ख़ास तौर से तक़वा और परहेज़गारी की उस कैफ़ियत को हासिल करने की कोशिश की जाए जिसे क़ुरआन मजीद रोज़े की असल ख़ासियत और मक़सद बताता है ।

4. अल्लाह की राह में ख़र्च करना

अल्लाह की राह में ख़र्च, न सिर्फ़ फ़र्ज़ बल्कि नफ़्ल भी जहाँ तक आपकी गुंजाइश और सामर्थ्य हो, करें । इस बारे में यह बात अच्छी तरह समझ लीजिए कि असल चीज़ माल की वह मिक़दार नहीं है जो आप खुदा की राह में ख़र्च करते हैं, बल्कि असल चीज़ वह क़ुरबानी है जो अल्लाह की ख़ातिर आपने की है । एक ग़रीब आदमी अगर अपना पेट काटकर खुदा की राह में एक पैसा ख़र्च करे तो वह अल्लाह के यहाँ उस

एक हज़ार रुपये से ज़्यादा क़ीमती है जो किसी मालदार ने अपने ऐश व आराम का दसवाँ या बीसवाँ हिस्सा क़ुरबान करके दिया है। इसके साथ यह भी आपको मालूम होना चाहिए कि सदक़ा उन सबसे अहम ज़रियों में से है जो नफ़्स की पाकी के लिए अल्लाह और उसके रसूल ने बताए हैं। आप इसके असरात का तजुर्बा करके इस तरह देख सकते हैं कि एक बार अगर आपसे कोई ग़लती हो जाए तो आप सिर्फ़ नादिम होने और तौबा करने पर बस करें और दूसरी बार अगर कोई भूल या ग़लती हो जाए तो आप तौबा के साथ ख़ुदा की राह में कुछ सदक़ा भी करें। दोनों हालतों का मुक़ाबला करके आप ख़ुद अंदाज़ा कर लेंगे कि तौबा के साथ सदक़ा इनसान के नफ़्स को ज़्यादा पाक और बुरे रुझानों के मुक़ाबले के लिए ज़्यादा असरदार साबित होता है।

यह वह सीधा-सादा तरीक़ा है जो क़ुरआन और सुन्नत ने हमें बताया है। इसपर अगर आप अमल करें तो मेहनतों और मुजाहिदों और मुराक़बों के बिना ही आप अपने घरों में अपने बाल-बच्चों के बीच रहते हुए और अपने सारे दुनियावी कारोबार को अंजाम देते हुए, अपने ख़ुदा से ताल्लुक़ बढ़ा सकते हैं।

अल्लाह से ताल्लुक़ को नापने का पैमाना

अब यह सवाल बाक़ी रह जाता है कि हम कैसे यह मालूम करें कि अल्लाह के साथ हमारा ताल्लुक़ कितना है और हमें कैसे पता चले कि वह बढ़ रहा है या घट रहा है? मैं कहता हूँ कि इसे मालूम करने के लिए आपको ख़्वाब की बशारतों, कश्फ़ और करामात के ज़ाहिर होने और अँधेरी कोठरी में नूर के नज़र आने का इंतिज़ार करने की कोई ज़रूरत नहीं है। इस ताल्लुक़ को नापने का पैमाना तो अल्लाह ने हर इनसान के दिल ही में रख दिया है। आप बेदारी की हालत में और दिन की रोशनी में हर

वक़्त इसको नापकर देख सकते हैं। अपनी ज़िंदगी का, अपने वक़्त का, अपनी दौड़-धूप का और अपने जज़बात का जाइज़ा लीजिए। अपना हिसाब आप लेकर देखिए कि ईमान लाकर अल्लाह से बैअ (खरीदो फ़रोख़्त) का जो समझौता आप कर चुके हैं उसे आप कहाँ तक निभा रहे हैं? अल्लाह की अमानतों में आपका इख़्तियार एक अमीन और अमानतदार ही का-सा इख़्तियार है या कुछ ख़यानत भी पाई जाती है। आपके औक़ात और मेहनतों और क़ाबलियतों और माल-असबाब का कितना हिस्सा खुदा के काम में लग रहा है और कितना दूसरे कामों में? आपके अपने फ़ायदे और जज़्बात पर चोट पड़े तो आपके गुस्से और बेचैनी का क्या हाल होता है और जब खुदा के मुक़ाबले में बग़ावत हो रही हो तो उसे देखकर आपके दिल की कुढ़न और आपके ग़ज़ब और बेचैनी की क्या कैफ़ियत रहती है? ये और इसी तरह के दूसरे बहुत-से सवाल हैं जो आप खुद अपने नफ़्स से कर सकते हैं और उसका जवाब लेकर हर दिन मालूम कर सकते हैं कि अल्लाह से आपका कोई ताल्लुक़ है या नहीं, और है तो कितना है और इसमें कमी हो रही है या इज़ाफ़ा हो रहा है। रहीं बशारतें और कश्फ़ व करामात और अनवार व तजल्लियात तो आप उनको पा लेने की फ़िक्र में न पड़ें। सच्ची बात यह है कि इस माद्दी दुनिया के धोखा देनेवाले मंज़रों में तौहीद की हक़ीक़त को पा लेने से बड़ा कोई कश्फ़ नहीं है। शैतान और उसकी संतान के दिलाए हुए डरावों और लालचों के मुक़ाबले में सही रास्ते पर क़ायम रहने से बड़ी कोई करामत नहीं है। कुफ़्र, फ़िस्क़ और गुमराही के अँधेरों में हक़ की रोशनी देखने और उसकी पैरवी करने से बड़ा कोई अनवार का मुशाहिदा नहीं है और मोमिन को अगर कोई सबसे बड़ी बशारत मिल सकती है तो वह अल्लाह को रब मानकर उसपर जम जाने और साबित क़दमी के साथ उसपर चलने से मिलती है।

आख़िरत

आख़िरत को तरजीह देना

अल्लाह से ताल्लुक़ के बाद दूसरी चीज़ जिसकी मैं आपको नसीहत करता हूँ वह यह है कि हर हाल में दुनिया पर आख़िरत को तरजीह दीजिए और अपने हर काम में आख़िरत ही की कामयाबी और भलाई को मक़सद बनाइए।

कुरआन मजीद हमें बताता है कि हमेशा और हमेशा रहनेवाली ज़िन्दगी की जगह आख़िरत है और दुनिया की इस आरज़ी क़यामगाह में हम सिर्फ़ इस इम्तिहान के लिए भेजे गए हैं कि खुदा के दिए हुए थोड़े-से साज़ो सामान, थोड़े-से अधिकारों और गिने-चुने औक़ात और मौक़ों में काम करके हममें से कौन अपने आपको खुदा की जन्नत में रहने के लायक़ साबित करता है। यहाँ जिस चीज़ का इम्तिहान हमसे लिया जा रहा है वह यह नहीं है कि हम कारख़ाने, कारोबार, खेतियाँ और हुकूमतें चलाने में क्या कमाल दिखाते हैं और इमारतें और सड़कें कैसी अच्छी बनाते हैं और एक शानदार तहज़ीब पैदा करने में कितनी कामयाबी हासिल करते हैं, बल्कि हमारा सारा इम्तिहान सिर्फ़ इस बात में है कि हम खुदा की दी हुई अमानतों में खुदा की ख़िलाफ़त और नियाबत का हक़ अदा करने की कितनी क़ाबिलियत रखते हैं। बाग़ी और खुदमुख़तार बनकर रहते हैं या फ़रमाँबरदार बनकर? खुदा की ज़मीन पर खुदा की मरज़ी पूरी करते हैं या अपने नफ़्स और अल्लाह के अलावा दूसरों की? खुदा की दुनिया को खुदा के मेयार के मुताबिक़ सँवारने की कोशिश करते हैं या बिगाड़ने की?

और ख़ुदा की ख़ातिर शैतानी ताक़तों से कशमकश और मुक़ाबला करते हैं या उनके आगे हथियार डाल देते हैं? जन्नत में आदम और हव्वा (अलै०) का जो पहला इम्तिहान था वह असल में इसी मामले में था और आख़िरत में जन्नत की सदा रहनेवाली आबादी के लिए इनसानों में से जिन लोगों का चुनाव होगा, वह भी उसी फ़ैसलाकुन सवाल पर होगा। इसलिए कामयाबी और नाकामी की असल कसौटी यह नहीं है कि इम्तिहान देने की मुद्दत में किसने शाही तख़्त पर बैठकर इम्तिहान दिया और किसने फाँसी के तख़्ते पर, और किसकी आज़माइश एक बहुत बड़ी सल्तनत देकर की गई और किसे एक झोपड़ी में आज़माया गया। इम्तिहानगाह के ये वक़्ती और आरज़ी हालात अगर अच्छे हों तो यह तरक़्क़ी और भलाई की दलील नहीं और बुरे हों तो यह नाकाम और घाटे में रह जाने की अलामत नहीं। असल कामयाबी जिसपर हमें अपनी निगाह जमाए रखनी चाहिए, यह है कि दुनिया की इस इम्तिहानगाह (परीक्षा-कक्ष) में जिस जगह हम बिठाए गए हों और जो कुछ भी देकर हमें आज़माया गया हो, उसमें हम अपने आपको ख़ुदा का वफ़ादार बंदा और उसकी मरज़ियों पर चलनेवाला साबित करें, ताकि आख़िरत में हमको वह पोज़ीशन मिले जो ख़ुदा ने अपने वफ़ादार बंदों के लिए रखी है।

भाइयो! यह है असल हक़ीक़त। मगर यह ऐसी हक़ीक़त है जिसे सिर्फ़ एक बार समझ लेना, और मान लेना काफ़ी नहीं है, बल्कि इसे हर वक़्त अपने दिल व दिमाग़ में ताज़ा रखने की सख़्त कोशिश करनी पड़ती है, वरना हर वक़्त इसका अन्देशा रहता है कि हम आख़िरत के इनकारी न होने के बावजूद दुनिया में उस तरीक़े पर काम करने लगें जो आख़िरत को भूलकर, दुनिया को मक़सद बनाकर काम करनेवालों का तरीक़ा है। इसकी वजह यह है कि आख़िरत एक ग़ैर महसूस चीज़ है जो मरने के बाद सामने

आनेवाली है । इस दुनिया में हम उसका और उसके अच्छे-बुरे नतीजों का एहसास सिर्फ़ ज़ेहनी तवज्जोह ही से कर सकते हैं । इसके मुक़ाबले में दुनिया एक महसूस चीज़ है जो अपना कड़वापन और मिठास हर वक़्त हमें चखाती रहती है और जिसके अच्छे और बुरे नतीजे हर वक़्त हमारे सामने आकर हमें यह धोखा देते रहते हैं कि असल नतीजे बस यही हैं । आख़िरत बिगड़े तो उसका थोड़ा-बहुत कड़वापन हमें सिर्फ़ दिल के छुपे हुए ज़मीर (अन्तःकरण) में महसूस होता है, शर्त सिर्फ़ यह है कि वह ज़िन्दा हो । मगर दुनिया बिगड़े तो उसकी चुभन हमारा रोंगटा-रोंगटा महसूस करता है और हमारे बाल-बच्चे, निकट संबधी व रिश्तेदार, दोस्त, जानकार और सोसाइटी के आम लोग, सब मिल-जुलकर उसे महसूस करते और कराते हैं। इसी तरह आख़िरत सँवरे तो उसकी कोई ठंडक हमें दिल के एक कोने के सिवा महसूस नहीं होती और वहाँ भी इस शक्ल में महसूस होती है जबकि लापरवाही ने दिल के इस कोने को शून्य और मुर्दा न कर दिया हो। मगर अपनी दुनिया की कामयाबी हमारे पूरे वुजूद के लिए लज़्ज़त बन जाती है, हमारे तमाम हवास (इंद्रियाँ) उसको महसूस करते हैं और हमारा सारा माहौल उसके एहसास में शरीक हो जाता है । यही वजह है कि आख़िरत को एक अक़ीदे के तौर पर मान लेना, चाहे बहुत मुशकिल न हो, मगर उसे सोचने के अंदाज़ और अख़लाक़ व आमाल के पूरे निज़ाम की बुनियाद बनाकर ज़िन्दगी-भर काम करना बहुत मुशकिल है और दुनिया को ज़बान से मामूली और नीचा कह देना, चाहे कितना ही आसान हो मगर दिल से उसकी मुहब्बत और ख़याल से उसकी चाहत को निकाल फेंकना कोई आसान काम नहीं है । यह कैफ़ियत बड़ी कोशिश से हासिल होती है और बराबर कोशिश करते रहने से बाक़ी और क़ायम रह सकती है ।

आख़िरत की फ़िक्र कैसे पैदा करें?

आप पूछेंगे कि आख़िरत की सही फ़िक्र हम अपने अन्दर कैसे पैदा करें और किन चीज़ों से इसमें मदद लें? मैं कहूँगा कि इसके भी दो तरीक़े हैं। एक फ़िक्री (वैचारिक) तरीक़ा और दूसरा अमली (व्यवहारिक) तरीक़ा।

1. फ़िक्री तरीक़ा

फ़िक्री तरीक़ा यह है कि आप सिर्फ़ यह बात कहने पर बस न करें कि "मैं आख़िरत के दिन पर ईमान ले आया।" बल्कि आप क़ुरआन को समझकर पढ़ने की आदत डालें; जिससे धीरे-धीरे आपको आख़िरत का आलम दुनिया के इस परदे के पीछे यक़ीन की आँखों से दिखाई देने लगेगा। क़ुरआन का शायद कोई एक पेज भी ऐसा नहीं है जिसमें किसी न किसी ढंग से आख़िरत के बारे में न बताया गया हो। जगह-जगह आपको आख़िरत का नक़्शा ऐसी तफ़सील के साथ मिलेगा कि जैसे कोई वहाँ का आँखों देखा हाल बयान कर रहा हो, बल्कि बहुत-सी जगहों पर तो यह नक़्शा ऐसे अजीब और हैरतनाक तरीक़ों से खींचा गया है कि पढ़नेवाला थोड़ी देर के लिए अपने आपको वहाँ पहुँचा हुआ महसूस करने लगता है और बस इतनी कमी रह जाती है कि इस माद्दी दुनिया का धुँधला-सा परदा ज़रा सामने से हट जाए तो आदमी आँखों से वह सब कुछ देख ले जो शब्दों में बयान किया जा रहा है। इसलिए क़ुरआन को पाबंदी से लाज़िमी तौर पर पढ़ते रहने से धीरे-धीरे आदमी को यह कैफ़ियत हासिल हो सकती है कि उसके दिल व दिमाग़ पर आख़िरत का ख़याल छाया रहे और वह हर वक़्त यह महसूस करने लगे कि उसकी हमेशा रहनेवाली क़यामगाह मौत के बाद की दुनिया है, जिसकी उसे दुनिया की इस आरज़ी ज़िन्दगी में तैयारी करनी है।

इस ज़ेहनी कैफ़ियत को और ज़्यादा ताक़त हदीसों के पढ़ने से मिलती है जिसमें बार-बार मौत के बाद की ज़िन्दगी के हालात बिलकुल एक चश्मदीद मुशाहिदे की शक्ल में से आदमी के सामने आते हैं और यह भी मालूम होता है कि प्यारे नबी (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के सहाबा किराम (रज़ि०) किस तरह आख़िरत के यक़ीन से लबरेज रहते थे।

फ़िर इस कैफ़ियत को मज़बूत करने में और ज़्यादा मदद क़ब्रों की ज़ियारत से मिलती है, जिसका सिर्फ़ एक ही मक़सद नबी (सल्ल०) ने यह बताया है कि आदमी को अपनी मौत याद रहे और वह दुनिया के इस धोखा देनेवाले साज़ व सामान के साथ मशग़ूल होकर, इस बात को न भूल जाए कि आख़िर उसे जाना वहीं है जहाँ सब गए हैं और रोज़ चले जा रहे हैं। अलबत्ता यह ख़याल रहे कि इस मक़सद के लिए वे मज़ार सबसे कम फ़ायदेमन्द हैं जिन्हें आज बिगड़े हुए लोगों ने ज़रूरत पूरी करने और मुशकिलों को दूर करने के मरकज़ बना रखे हैं। उनके बजाए आम लोगों की क़ब्रों की ज़ियारत करके ज़्यादा फ़ायदा उठा सकते हैं या फिर बादशाहों के उन आलीशान मक़बरों को देखकर जिनके आस-पास कहीं कोई चौकीदार या दरबान अदब-क़ायदा सिखानेवाला नहीं है।

2. अमली तरीक़ा

अब अमली तरीक़े को लीजिए। आपको दुनिया में रहते हुए अपनी घरेलू ज़िन्दगी में, अपने महल्ले और अपनी बिरादरी की ज़िन्दगी में, अपने लेन-देन और अपनी रोज़ी-रोज़गार के कामों में, ग़रज़ हर तरफ़, हर पल क़दम-क़दम पर ऐसे दुराहे मिलते हैं जिनमें से एक रास्ते की तरफ़ जाना आख़िरत पर ईमान लाने का तक़ाज़ा होता है और दूसरे को अपनाना दुनियापरस्ती का तक़ाज़ा। ऐसे हर मौक़े पर पूरी कोशिश कीजिए कि

आपका क़दम पहले रास्ते ही की तरफ़ बढ़े और अगर नफ़्स की कमज़ोरी से या लापरवाही की वजह से कभी दूसरे रास्ते पर आप चल निकले हों तो होश आते ही कोशिश कीजिए, चाहे कितने ही दूर पहुँच चुके हों। फिर समय-समय पर अपना हिसाब लेकर देखते रहिए कि कितने मौक़ों पर दुनिया आपको खींचने में कामयाब हुई और कितनी बार आप आख़िरत की तरफ़ खिँचने में कामयाब हुए। यह जाइज़ा आपको खुद ही नाप-तौलकर बताता रहेगा कि आपके अन्दर आख़िरत की फ़िक्र कितनी पली-बढ़ी और अभी कितनी कुछ कमी आपको पूरी करनी है। जितनी कमी आप खुद महसूस करें उसे खुद ही पूरा करने की कोशिशि करें। बाहरी मदद आपको ज़्यादा से ज़्यादा हासिल हो सकती है तो इस तरह हासिल हो सकती है कि दुनियापरस्त लोगों को छोड़कर ऐसे नेक लोगों से मेल-जोल बढ़ाएँ जो आपकी जानकारी में दुनिया पर आख़िरत को तरजीह देनेवाले हों, मगर याद रखिए कि आज तक कोई ज़रिया ऐसा मालूम नहीं हो सका है, जो आपके अन्दर खुद आपकी कोशिश के बिना किसी सिफ़त को घटा सके या ऐसी कोई नई सिफ़त आपमें पैदा कर सके जिसका माद्दा आपकी तबीअत में मौजूद न हो।

बेजा ग़ुरूर से बचाव

बेजा पिन्दार का ख़तरा

तीसरी बात जिसकी मैं आपको नसीहत करता हूँ वह यह है कि पिछले कुछ सालों की लगातार कोशिशों से जो कुछ भी इस्लाह आपकी इनफ़िरादी सीरत (वैयक्तिक चरित्र), आपके इजतिमाई अख़लाक़ और आपके जमाअती नज़्म में उजागर हुई है, उसपर फ़ख्र का जज़्बा आपके दिल में हरगिज़ पैदा न हो। आप न अलग-अलग, न जमाअती हैसियत से, कभी इस ग़लतफ़हमी में मुबतिला हों कि हम कामिल और मुकम्मल हो गए हैं, जो कुछ बनना था बन चुके हैं, कोई और कमाल ऐसा मौजूद नहीं रहा है जो हमें हासिल करना हो।

मुझे और जमाअत के दूसरे ज़िम्मेदार लोगों को कभी-कभी एक फ़ितने से दोचार होना पड़ता है। एक ज़माने से बहुत-से लोग जमाअत इस्लामी की, और असल में उस तहरीक की जिसके लिए यह जमाअत काम करने उठी है, क़द्र घटाने के लिए यह मशहूर कर रहे हैं कि यह जमाअत तो सिर्फ़ एक सियासी जमाअत है, आम सियासी पार्टियों की तरह काम कर रही है, इसमें नफ़्स के तज़किए और रूहानियत का कहीं नाम व निशान तक नहीं है, इसमें अल्लाह से ताल्लुक़ बनाने और आख़िरत की फ़िक्र की कमी है। इसके चलानेवाले खुद बग़ैर पीर व मुर्शिद के हैं। न उन्होंने किसी ख़ानक़ाही सिलसिले से तक़वा और एहसान की तरबियत पाई है, न उनके साथियों को इस तरह की कोई तरबियत मिलने की उम्मीद है। ये बातें इसलिए की जाती हैं कि जमाअत इस्लामी के कारकुनों में और इससे दिलचस्पी रखनेवाले लोगों में बद-दिली फैले और फिर वे पलटकर

उन्हीं आसतानों से जुड़ जाएँ, जहाँ आज तक कुफ़्र की छाया में इस्लाम की किसी न किसी जुज़्वी (आंशिक) ख़िदमत ही को बड़ी से बड़ी चीज़ समझा जाता रहा है, जहाँ पूरे दीन को एक निज़ामे ज़िन्दगी की हैसियत से क़ायम और ग़ालिब करने का ख़याल सिरे से मौजूद ही नहीं रहा है। बल्कि जहाँ यह ख़याल अगर पेश किया भी गया है, तो हर तरह की बनावटी बातों से उसको एक ग़ैर दीनी ख़याल साबित करने की कोशिश की गई है और उसे इस तरह बदनाम किया गया है कि मानो कुफ़्र व फ़िस्क़ के मुक़ाबले में इस्लाम को ग़ालिब निज़ाम बनाने की फ़िक्र सरासर एक दुनिया-परस्ताना फ़िक्र है। इस हालत में हमको मजबूरन ख़ानक़ाही तज़किय-ए-नफ़्स और इस्लामी तज़किय-ए-नफ़्स का फ़र्क़ वाज़ेह करना पड़ता है और यह बताना पड़ता है कि वह हक़ीक़ी तक़वा और एहसान क्या है जो इस्लाम आपसे चाहता है। वह टक्साली प्रामाणिक तक़वा और एहसान क्या चीज़ है जिसकी तरबियत हमारे यहाँ दीनदारी फ़न के माहिरीन दिया करते हैं। इसके साथ हमें जमाअत इस्लामी के इस्लाह और तरबियत के तरीक़ों और उसके नतीजों को भी खोलकर बयान करना पड़ता है ताकि एक सही दीनी हिस रखनेवाला आदमी खुद ही महसूस करे कि जमाअत इस्लामी का असर क़बूल करने के बाद शुरू ही में इनसान के अन्दर तक़वा और एहसान की जो हक़ीक़ी कैफ़ियत पैदा होने लगती है, वह उम्र-भर तज़किय-ए-नफ़्स की तरबियत पाने बल्कि तरबियत देनेवालों में भी नज़र नहीं आती।

ये बातें हमें मजबूरन अपने ऐतिराज़ करनेवालों की बेइंसाफ़ियों की वजह से कहनी पड़ती हैं। अपने बचाव के लिए नहीं, बल्कि इस्लामी तहरीक को बचाने के लिए कहनी पड़ती हैं। लेकिन इन्हें कहते वक़्त हम खुदा की पनाह माँगते हैं कि कहीं ये बातें हमारे अन्दर और हमारे साथियों

के अन्दर घमण्ड और गुरूर और अपने मुकम्मल होने की ग़लतफ़हमी न पैदा कर दें । इसलिए कि अगर, खुदा न करे कि यह झूठा पिन्दार (अभिमान) हमारे अन्दर पैदा हो गया तो हमने आज तक जो कुछ हासिल किया है वह भी खो बैठेंगे ।

महफ़ूज़ रहने की तदबीरें

मैं चाहता हूँ कि उक्त ख़तरे से बचने के लिए तीन बातें आप अच्छी तरह समझ लें और उन्हें कभी न भूलें —

पहली बात यह है कि कमाल एक कभी न ख़त्म होनेवाली तथा अंतहीन चीज़ है जिसकी आख़िरी हद हमारी निगाहों से ओझल है । आदमी का काम यह है कि बराबर उसकी बुलंदियों पर चढ़ने की कोशिश करता रहे और किसी भी मक़ाम पर पहुँचकर गुमान न करे कि वह कामिल हो गया है । जब भी किसी इनसान को यह ग़लतफ़हमी पैदा होती है उसकी तरक़्क़ी फ़ौरन रुक जाती है और रुक ही नहीं जाती, बल्कि पतन और गिरावट शुरू हो जाती है। याद रखिए कि बुलंदी पर चढ़ने ही के लिए नहीं, एक बुलंद मक़ाम पर ठहरने के लिए भी एक लगातार जिद्दोजुहद की ज़रूरत होती है और इसका सिलसिला बन्द होते ही पस्ती की कशिश (आकर्षण) आदमी को नीचे खींचना शुरू कर देती है । एक अक़्लमंद आदमी को कभी नीचे झुककर नहीं देखना चाहिए कि वह ऊपर कितना चढ़ चुका है । उसे ऊपर देखना चाहिए कि जो बुलंदियाँ अभी चढ़ने के लिए बाक़ी हैं, वे उससे कितनी दूर हैं ।

दूसरी बात यह है कि इस्लाम ने हमारे सामने इनसानियत का इतना बुलंद मेयार रखा है जिसकी शुरू की मंज़िलें भी ग़ैर इस्लामी मज़हबों और धर्मों के कमाल के मेयार से ऊँची हैं । और यह कोई ख़याली मेयार नहीं

है, बल्कि अमल की दुनिया में नबियों और सहाब-ए-किराम और उम्मत के सालहीन की पाक ज़िन्दगियाँ उसकी बुलंदियों की निशानदेही कर रही हैं। इस मेयार को आप हमेशा निगाह में रखें। यह आपको मुकम्मल होने की ग़लतफ़हमी से बचाएगा; अपनी पस्ती और कमी का एहसास दिलाएगा और तरक़्क़ी की कोशिशों के लिए हर वक़्त इतनी बुलंदियाँ आपके सामने पेश करता रहेगा कि उम्र-भर की जिद्दोजुहद के बाद भी आप यही महसूस करेंगे कि अभी बहुत मंज़िलें चढ़ने के लिए बाक़ी हैं। अपने आस-पास के दम तोड़ते हुए मरीज़ों को देखकर अपनी ज़रा-सी तंदुरुस्ती पर नाज़ न कीजिए, अख़लाक़ और रूहानियत के उन पहलवानों पर निगाह रखिए, जिनकी जगह आज आप शैतान से मुक़ाबिले के लिए अखाड़े में उतरे हैं। मोमिन का काम यह है कि दीन की दौलत के मामले में वह हमेशा अपने से ऊँचे लोगों की तरफ़ देखे, ताकि यह दौलत कमाने की लालसा और ख़्वाहिश कभी उसके अंदर ख़त्म न होने पाए और दुनिया की दौलत के मामले में हमेशा अपने से कमतर लोगों की तरफ़ देखे, ताकि जितना कुछ भी उसके रब ने उसे दिया है उसपर वह ख़ुदा का शुक्र अदा करे और धन-दौलत की प्यास थोड़े ही से बुझ जाए।[1]

....

1. ठीक यही बात एक हदीस में है जिसमें नबी (सल्ल॰) फ़रमाते है –

"जिसने अपने दीन के मामले में अपने से ऊपरवाले को देखा और उसकी पैरवी में आगे बढ़ा और अपनी दुनिया के मामले में अपने से कमतर को देखा और अल्लाह के दिए हुए फ़ज़्ल पर उसका शुक्र अदा किया, वह अल्लाह के यहाँ सब्र करनेवाला और शुक्र अदा करनेवाला लिखा गया। इसके विपरीत जिसने अपने दीन के मामले में अपने से कमतर को और दुनिया के मामले में अपने से ऊँचे को देखा और दुनिया पाने में जो कमी रह गई उसपर हसरत और अफ़सोस में मुबतिला हुआ, वह अल्लाह के यहाँ न शुक्र अदा करनेवाला लिखा गया न सब्र करनेवाला।"

तीसरी बात यह है कि हक़ीक़त में हमारी जमाअत ने अब तक अपने अन्दर जो ख़ूबियाँ पैदा की हैं वह बस इसलिए ख़ूब हैं कि हमारे आस-पास का बिगाड़ हद से बढ़ा हुआ है । इस घटा टोप अँधेरे में एक छोटा-सा दिया भी, जिसे रोशन करने की तौफ़ीक़ हम लोगों को नसीब हो गई, नुमायाँ नज़र आने लगा । वरना सच्ची बात यह है कि इस्लाम के कम से कम मेयारे मतलूब (अपेक्षित मेयार) को सामने रखकर जब हम अपना जाइज़ा लेते हैं तो हर पहलू से हमें अपनी शख़्सियत में और अपने जमाअती निज़ाम में कमियाँ ही कमियाँ नज़र आती हैं । इसलिए अगर हम अपनी कोताहियों को तस्लीम करें तो यह सिर्फ़ एक इनकिसार के तौर पर न हो, बल्कि एक हक़ीक़ी एतिराफ़ होना चाहिए और उसका नतीजा यह होना चाहिए कि हम अपनी एक-एक कोताही को समझें और उसे दूर करने की कोशिश करें ।

क़रीबी माहौल की इस्लाह

अपने घरों की इस्लाह

अब मैं आप सब लोगों को यह भी नसीहत करता हूँ कि आप अपनी औलाद की और घरवालों की इस्लाह पर ख़ास ध्यान दें। अल्लाह का हुक्म है—

क़ू अन्फु-स-कुम् व अहलीकुम नारा।

अर्थात, ''अपने आपको और अपने घरवालों को जहन्नम की आग से बचाओ'' (क़ुरआन, 66:6)। जिस औलाद के लिए और जिन बीवियों के लिए आपको खाने-पीने और पहनने की फ़िक्र होती है, उनके लिए आपको सबसे बढ़कर फ़िक्र इस बात की होनी चाहिए कि वे जहन्नम का ईंधन न बनने पाएँ। आपको अपनी हद तक उनकी आख़िरत सँवारने और उन्हें जन्नत के रास्ते पर डालने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। फिर अगर, ख़ुदा न करे! उनमें से कोई खुद बिगड़े तो आपपर उसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं है। बहरहाल उसकी आख़िरत ख़राब होने में आपका कोई हिस्सा न हो। कभी-कभी मेरे पास इस तरह की शिकायतें आती रहती हैं कि जमाअत के रुफ़क़ा दुनिया की इस्लाह की जितनी फ़िक्र करते हैं, उतनी बाल-बच्चों की इस्लाह और ख़ानदान की इस्लाह की फ़िक्र नहीं करते। मुमकिन है कि कुछ लोगों के मामले में ये शिकायतें दुरुस्त हों और कुछ के मामले में बात बढ़ा-चढ़ाकर पेश की गई हो। अलग-अलग एक-एक शख़्स के हाल की खोजबीन मेरे लिए मुशकिल है। इसलिए मैं यहाँ इस बारे में एक आम नसीहत पर बस करता हूँ। हम सबकी यह तमन्ना होनी

चाहिए और तमन्ना के साथ कोशिश भी, कि दुनिया में जो हमें प्यारे हैं, उन्हें सलामती की राह पर देखकर हमारी आँखे ठंडी हों।

رَبَّنَا هَبْ لَنَا مِنْ اَزْوَاجِنَا وَ ذُرِّيّٰتِنَا قُرَّةَ اَعْيُنٍ وَّاجْعَلْنَا
لِلْمُتَّقِيْنَ اِمَامًا۔ (قرآن، ۲۵:۷۵)

"ऐ हमारे रब! हमें हमारी बीवियाँ और हमारी औलाद की तरफ़ से आँखों की ठंडक नसीब कर और हमें परहेज़गारों का सरपरस्त बना।" (क़ुरआन, 25:75)

इस मामले में रुफ़क़ा को चाहिए कि वे एक-दूसरे की ज़िन्दगी में दिलचस्पी लें और न सिर्फ़ अपनी औलाद को, बल्कि अपने रुफ़क़ा की औलाद को भी सँवारने में हिस्सा लें। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक बच्चा अपने बाप का असर क़बूल नहीं करता, मगर अपने बाप के दोस्तों का असर क़बूल कर लेता है।

आपसी इस्लाह

मैं आपको यह नसीहत भी करता हूँ कि आप अपनी इस्लाह के साथ-साथ आपस में भी एक-दूसरे की इस्लाह करें। जो लोग ख़ुदा का बोलबाला करने के लिए एक जमाअत बनें, उन्हें एक-दूसरे का मददगार, हमदर्द और ग़मख़्वार होना चाहिए। उन्हें यह समझना चाहिए कि वे अपने इस मक़सद में कामयाब नहीं हो सकते जब तक कि उनकी जमाअत मजमूई तौर पर अख़लाक़ और नज़्म के लिहाज़ से मज़बूत न हो और इस एहसास का नतीजा यह होना चाहिए कि सब एक-दूसरे की तरबियत में मददगार बनें और उनमें हरेक दूसरे को सहारा देकर ख़ुदा की राह में आगे

बढ़ाने की कोशिश करे । इस्लाम में इजतिमाई तज़किये और इस्लाह का तरीक़ा यही है कि मैं गिरता नज़र आऊँ तो आप दौड़कर मुझे सँभालें और आप डगमगा रहे हों तो मैं बढ़कर आपका हाथ थाम लूँ । मेरे दामन पर कोई धब्बा दिखाई पड़े तो आप उसे साफ़ करें और आपका दामन गंदा हो रहा-हो तो मैं उसे पाक करूँ । जिस चीज़ में मेरी भलाई और बेहतरी आपको महसूस हो उसे आप मुझ तक पहुँचाएँ और जिस चीज़ में आपकी दुनिया और आख़िरत की भलाई मुझे महसूस हो उसे मैं आप तक पहुँचाऊँ। दुनिया में जब लोग एक-दूसरे से लेन-देन करते हैं तो मजमूई तौर पर सबकी खुशहाली में इज़ाफ़ा होता है । इसी तरह अख़लाक़ और रूहानियत की दुनिया में भी जब यह आपसी मदद और लेन-देन का तरीक़ा चल पड़ता है, तो पूरी जमाअत का सरमाया बढ़ता चला जाता है ।

आपसी इस्लाह का तरीक़ा

आपसी इस्लाह का सही तरीक़ा यह है कि जिस शख़्स की कोई बात आपको खटके या जिससे कोई शिकायत आपको हो, उसके मामले में आप जल्दी न करें, बल्कि उसे अच्छी तरह समझने की कोशिश करें, फिर पहली फ़ुरसत में खुद उस शख़्स से मिलकर तनहाई में बात करें । इसपर अगर इस्लाह न हो और मामला आपकी नज़र में कुछ अहमियत रखता हो तो उसे अपने इलाक़े के अमीर जमाअत के इल्म में लाएँ । वह पहले खुद इस्लाह की कोशिश करे और फिर ज़रूरत हो, तो जमाअत के इजतिमा में उसे पेश करे । इस पूरी मुद्दत में इस मामले का ज़िक्र ग़ैर-मुताल्लिक़ लोगों से करना और मुताल्लिक़ शख़्स की ग़ैर-मौजूदगी में उसकी चरचा करना, खुल्लमखुल्ला ग़ीबत है, जिससे पूरी तरह बचना चाहिए और ऐसे मामलों में मरकज़ की तरफ़ रुजू करना उस वक़्त तक सही नहीं है जब तक

मक़ामी जमाअत इस्लाह की कोशिशों में नाकाम होकर मरकज़ से मदद लेने की ज़रूरत महसूस न करे ।

इजतिमाई तनक़ीद और उसका सही तरीक़ा

आपस में एक-दूसरे की ग़लतियों और कमज़ोरियों पर तनक़ीद करना भी इजतिमाई इस्लाह का एक मुफ़ीद तरीक़ा है। मगर तनक़ीद की सही हदों (मर्यादाओं) और आदाब को ध्यान में न रखने से यह सख़्त नुक़सानदेह भी हो सकता है । इसलिए मैं वाज़ेह तौर पर यह बता देना चाहता हूँ कि इसके आदाब की हदें क्या हैं?

1. तनक़ीद हर वक़्त हर मजलिस में न हो, बल्कि सिर्फ़ खुसूसी इजतिमा में अमीर जमाअत के कहने पर या उसकी इजाज़त से हो ।

2. तनक़ीद करनेवाला अल्लाह को गवाह समझकर पहले खुद अपने दिल का जाइज़ा ले ले कि वह खुलूस और ख़ैरख़्वाही के जज़्बे से तनक़ीद कर रहा है या उसका सबब कोई नफ़सानी जज़्बा है । अगर पहली सूरत हो तो बेशक तनक़ीद की जाए; वरना ज़बान बन्द करके खुद अपने नफ़्स को उस नापाकी से बचाने की फ़िक्र करनी चाहिए ।

3. तनक़ीद का अंदाज़ और ज़बान, दोनों ऐसे होने चाहिएँ, जिनसे हर सुननेवाले को महसूस हो कि आप सही मानों में इस्लाह चाहते हैं ।

4. तनक़ीद के लिए ज़बान खोलने से पहले यह इतमीनान कर लीजिए कि आपके एतिराज़ की कोई बुनियाद हक़ीक़त में मौजूद है । बिना तहक़ीक़ के किसी के ख़िलाफ़ कुछ कहना एक गुनाह है, जिससे फ़साद पैदा होता है ।

5. जिस शख़्स पर तनक़ीद की जाए उसे सब्र और बरदाश्त के साथ बात सुननी चाहिए, इनसाफ़ के साथ उसपर ग़ौर करना चाहिए, जो

बात सही हो उसे सीधी तरह मान लेना चाहिए और जो बात ग़लत हो उसका सबूत के साथ जवाब देना चाहिए । तनक़ीद सुनकर जोश और गुस्से में आ जाना गुरूर और घमंड की अलामत है ।

6. तनक़ीद और उसका जवाब, फिर जवाब के जवाब का सिलसिला इस तरह नहीं चलना चाहिए कि उसकी कोई हद ही न हो और वह मुस्तक़िल रंजिश व बहस बनकर रह जाए । बात सिर्फ़ उस वक़्त तक होनी चाहिए जब तक दोनों तरफ़ के मुख़ालिफ़ पहलू साफ़ तौर पर सामने न आ जाएँ । इसके बाद भी अगर मामला साफ़ न हो तो बातचीत रोक दीजिए; ताकि दोनों तरफ़ के लोग ठंडे दिल से अपनी-अपनी जगह ग़ौर कर सकें । फिर अगर वाक़ई उसे साफ़ करना ज़रूरी ही हो तो दूसरे इजतिमा में फिर उसको छेड़ा जा सकता है । मगर आपके जमाअती नज़्म में कोई जगह ऐसी ज़रूर होनी चाहिए, जहाँ इख़्तिलाफ़ी मामलात का आख़िरी फ़ैसला हो और जहाँ से फ़ैसला हो जाने के बाद झगड़ा ख़त्म हो जाए ।

इन हदों को ध्यान में रखकर जो तनक़ीद की जाए, वह न सिर्फ़ यह है कि फ़ायदेमन्द है बल्कि जमाअती ज़िन्दगी को सही रखने के लिए बहुत ही ज़रूरी है । इसके बिना कोई जमाअत ज़्यादा देर तक सही रास्ते पर नहीं चल सकती है । इस तनक़ीद से किसी को भी ऊपर नहीं होना चाहिए, चाहे वह आपका अमीर हो, या मजलिसे शूरा हो, या पूरी जमाअत हो । मैं इसको जमाअत को दुरुस्त रखने के लिए ज़रूरी समझता हूँ । और मुझे यक़ीन है कि, जिस दिन अल्लाह न करे, हमारी जमाअत में इसका दरवाज़ा बन्द हुआ उसी दिन हमारे बिगाड़ का दरवाज़ा खुल जाएगा । यही वजह है कि मैं शुरू से हर आम इजतिमा के बाद जमाअत के अरकान का एक ख़ास इजतिमा इसी मक़सद के लिए करता हूँ कि इस जमाअत के काम

और निज़ाम का पूरा तनक़ीदी जाइज़ा लिया जाए। ऐसे इजतिमाओं में सबसे पहले मैं ख़ुद अपने आपको तनक़ीद के लिए पेश करता हूँ, ताकि जिसको मुझपर या मेरे काम पर कोई एतिराज़ हो वह उसे सबके सामने बिना झिझक पेश करे और उसकी तनक़ीद से या तो मेरी इस्लाह हो जाए या मेरे जवाब से उसकी और उसकी तरह सोचनेवाले दूसरे लोगों की ग़लतफ़हमी दूर हो जाए। चुनांचे इस तरह का इजतिमा कल रात ही को हो चुका है जिसमें खुली और आज़ादाना तनक़ीद का मंज़र साथी देख चुके हैं। मुझे यह मालूम करके हैरत हुई कि यह मंज़र हमारे कुछ नए रुफ़क़ा के लिए, जिन्हें ऐसे मंज़र देखने का पहली बार मौक़ा मिला, सख़्त सदमे की वजह बना। न मालूम उन्होंने किस निगाह से उसको देखा कि उन्हें सदमा हुआ। बसीरत (विवेक) की निगाह से देखते तो उनके दिल में जमाअत का मक़ाम पहले से ज़्यादा बढ़ जाता। आख़िर इस सरज़मीन पर जमाअते इस्लामी के सिवा और कौन-सी जमाअत ऐसी है जिसमें तीन-चार सौ आदमियों के मजमे में कई घंटे तक ऐसी खुली और आज़ादाना तनक़ीदें हों और फिर न कुर्सियाँ उछलें, न सिर फूटें बल्कि इजतिमा के ख़त्म होने पर किसी के दिल में किसी की तरफ़ से मैल तक न हो?

फ़रमाँबरदारी और हुक्म

फ़रमाँबरदारी के जज़्बे को बढ़ाने की ज़रूरत

एक चीज़ जिसका एहसास आपको दिलाने की ज़रूरत मुझे महसूस होती है, वह यह है कि अभी आपके अन्दर फ़रमाँबरदारी और नज़्म (अनुशासन) की बहुत कमी है। हालाँकि अपने माहौल को देखते हुए हमें अपने अन्दर बड़ा डिसिप्लिन नज़र आता है, लेकिन एक तरफ़ जब हम इस्लाम के मेयारे मतलूब को देखते हैं और दूसरी तरफ़ इस कठिन काम को देखते हैं जो हमें करना है, तो सच्ची बात यह है कि हमारा यह मौजूदा डिसिप्लिन बहुत ही मामूली महसूस होता है।

आप कुछ मुटठी-भर आदमी हैं जो थोड़े-से वसाइल और संसाधन लेकर मैदान में आए हैं और काम आपके सामने यह है कि कुफ्र और जाहिलियत की हज़ारों गुना ज़्यादा ताक़त और लाखों गुना ज़्यादा वसाइल के मुक़ाबले में न सिर्फ़ ज़ाहिरी निज़ामे ज़िन्दगी (जीवन-व्यवस्था) को, बल्कि अन्दरूनी रूह तक को बदल डालें। आप चाहे तादाद के लिहाज़ से देख लें या वसाइल के लिहाज़ से, आपके और उनके बीच कोई बराबरी ही नहीं है। अब अख़लाक़ और नज़्म की ताक़त के सिवा और कौन-सी ताक़त आपके पास ऐसी हो सकती है जिससे आप उनके मुक़ाबले में अपनी जीत की उम्मीद कर सकें? आपकी अमानत और सच्चाई का सिक्का अपने माहौल पर बैठा हुआ हो और आपका नज़्म (Discipline) इतना ज़बरदस्त हो कि जमाअत के ज़िम्मेदार लोग जिस वक़्त, जिस काम पर, जितनी ताक़त जमा करना चाहें एक इशारे पर जमा कर सकें, तभी आप अपने अज़ीम मक़सद में कामयाब हो सकते हैं।

फ़रमाँबरदारी और इताअत की शरई हैसियत

इस्लामी नज़रिए से दीन को क़ायम करने की कोशिश करनेवाली एक जमाअत में जमाअत के ज़िम्मेदार लोगों की मारूफ़ में इताअत असल में अल्लाह और उसके रसूल की इताअत का एक हिस्सा है। जो शख़्स अल्लाह का काम समझकर यह काम कर रहा है और अल्लाह ही के नाम की ख़ातिर जिसने किसी को अपना अमीर माना है, वह उसके जाइज़ हुक्मों की इताअत करके असल में उसकी नहीं, बल्कि अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करता है। अल्लाह से और उसके दीन से आदमी का ताल्लुक़ जितना ज़्यादा होगा, उतना ही वह फ़रमाँबरदारी और इताअत में बढ़ा हुआ होगा और जितनी उस ताल्लुक़ में कमी होगी, उतनी ही फ़रमाँबरदारी में और इताअत में भी कमी होगी। इससे ज़्यादा क़ाबिले क़द्र कुरबानी और क्या हो सकती है कि जिस शख़्स का आपपर कोई ज़ोर नहीं है और जिसे सिर्फ़ खुदा के काम के लिए आपने अमीर माना है, उसका हुक्म आप एक वफ़ादार मातहत की तरह मानें और अपनी ख़्वाहिश और पसन्द और फ़ायदे के ख़िलाफ़ उसके नागवार हुक्मों तक को खुशी-खुशी पूरा करते चले जाएँ। यह कुरबानी चूँकि अल्लाह के लिए है, इसलिए इसका सवाब भी अल्लाह के यहाँ बहुत बड़ा है। इसके बरख़िलाफ़ जो शख़्स इस काम में शरीक होने के बाद भी किसी हाल में छोटा बनने पर राज़ी न हो और इताअत को अपने मक़ाम से गिरी हुई चीज़ समझे या हुक्म की चोट अपनी नफ़्स की गहराइयों में महसूस करे और कड़वाहट के साथ उसपर तिलमिलाए, या अपनी ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ हुक्मों को मानने में हिचकिचाए, वह असल में इस बात का सबूत पेश करता है कि अभी उसके नफ़्स ने अल्लाह के आगे पूरी तरह इताअत करने का सिर नहीं झुकाया है और अभी उसके गुरूर और घमंड ने अपने दावों से जुदाई हासिल नहीं की है।

ज़िम्मेदारों का रवैया कैसा होना चाहिए?

जमाअत के अरकान को ज़िम्मेदारों के हुक्मों को मानने और उनकी इताअत करने की नसीहत करने के साथ मैं जमाअत के अमीरों को भी यह नसीहत करना ज़रूरी समझता हूँ कि वे हुक्म देने का सही तरीक़ा सीखें। जिस शख़्स को भी जमाअत के नज़्म के अन्दर किसी ज़िम्मेदारी का पद सौंपा जाए और कुछ लोग उसकी मातहतों में दिए जाएँ, उसके लिए यह हरगिज़ हलाल नहीं है कि वह अपने को कोई बड़ी चीज़ समझने लगे और अपने मातहत (अधीन) रुफ़क़ा पर बेजा हुक्म जताने लगे। उसे हुक्म चलाने में अपनी बड़ाई की लज़्ज़त नहीं लेनी चाहिए। उसे अपने रुफ़क़ा से नरमी और मुहब्बत के साथ काम लेना चाहिए। उसे इस बात से डरना चाहिए कि कहीं किसी कारकुन में इताअत न करने और मनमानी करने का जज़्बा उभार देने की ज़िम्मेदारी ख़ुद उसके अपने काम करने के किसी ग़लत तरीक़े पर आयद न हो जाए। उसे जवान और बूढ़े, कमज़ोर और ताक़तवर, अमीर और ग़रीब सबको एक ही लकड़ी से न हाँकना चाहिए, बल्कि जमाअत के अलग-अलग लोगों के ख़ास इनफ़िरादी हालात पर निगाह रखनी चाहिए और जो जिस लिहाज़ से भी मुनासिब तौर पर रिआयत का हक़दार हो, उसको वैसी ही रिआयत देनी चाहिए। जमाअत को ऐसे तरीक़े पर तरबियत देनी चाहिए कि अमीर जो कुछ मशविरे और अपील के अन्दाज़ में कहे, रुफ़क़ा उसको हुक्म के अन्दाज़ में लें और उसको पूरा करें। यह असल में जमाअती शऊर की कमी का नतीजा है कि अमीर की "अपील" असर-अन्दाज़ न हो और वह मजबूर होकर "हुक्म" देने की ज़रूरत महसूस करे। "हुक्म" तो तनख़ाह पानेवाली फ़ौज के सिपाही को दिया जाता है। वह रज़ाकार (स्वयंसेवी) सिपाही जो अपने दिल के जज़्बे से ख़ुदा की ख़ातिर इकट्ठे हुए हों; ख़ुदा के काम में

खुद अपने अमीर की इताअत के लिए हुक्म के मुहताज नहीं हुआ करते। उनको तो सिर्फ़ यह इशारा मिल जाना काफ़ी है कि फ़लाँ जगह तुमको अपने रब की फ़लाँ ख़िदमत बजा लाने का मौक़ा मिल रहा है। यह कैफ़ियत जिस दिन जमाअत के अमीरों और जमाअत के रुफ़क़ा में पैदा हो जाएगी, आप देखेंगे कि आपस की वह बहुत-सी तल्ख़ियाँ आपसे आप ख़त्म हो जाएँगी जो वक़्त-बेवक़्त ज़िम्मेदारों और मातहतों के बीच पैदा होती रहती हैं।

अल्लाह की राह में जिद्दोजुहद

इस सिलसिले में मेरी आख़िरी नसीहत यह है कि वे सब लोग जो जमाअत इस्लामी के साथ हैं अल्लाह की राह में जिद्दोजुहद यानी माली और जिसमानी क़ुरबानियों का जज़बा अपने अन्दर उभारें, ख़ुदा के काम को अपने निजी कामों पर तरजीह दें और इस काम में दिल की वह लगन पैदा करें जो उन्हें चैन से न बैठने दे।

आप ख़ुद ही मुसलमान न बनें, बल्कि अपनी जेब को भी मुसलमान बनाएँ। यह बात न भूलिए कि ख़ुदा के हक़ आपके जिस्म व जान और वक़्त ही पर नहीं हैं, आपके माल पर भी हैं। इस हक़ के लिए ख़ुदा और उसके रसूल ने कम से कम की हद तो मुक़र्रर कर दी है, मगर ज़्यादा से ज़्यादा की कोई हद मुक़र्रर नहीं की है। इस हद को मुक़र्रर करना आपका अपना काम है। अपने दिल से पूछिए कि कितना माल ख़ुदा की राह में ख़र्च करके आप यह ख़याल करने में हक़ पर होंगे कि जो कुछ आपके माल पर ख़ुदा का हक़ था वह आपने अदा कर दिया है। इस मामले में कोई शख़्स किसी दूसरे शख़्स का जज नहीं बन सकता। बेहतरीन जज हर उस शख़्स का अपना दिल और ईमान ही है अलबत्ता मैं इतना ज़रूर कहूँगा कि उन लोगों के तर्ज़े अमल से सबक़ हासिल कीजिए जो न ख़ुदा को मानते हैं, न आख़िरत को और फिर भी वह अपने बातिल नज़रियों को बढ़ावा देने के लिए ऐसी-ऐसी क़ुरबानियाँ करते हैं जिन्हें देखकर हम ख़ुदा और आख़िरत के माननेवालों को शर्म आनी चाहिए।

दीन को क़ायम करने के काम में रुफ़क़ा को जितनी लगन होनी

चाहिए, उसमें अभी मुझे बहुत कमी महसूस होती है। कुछ रफ़ीक़ (साथी) तो बेशक पूरी सरगरमी से काम कर रहे हैं, जिसे देखकर जी खुश हो जाता है और दिल से उनके हक़ में दुआ निकलती है। मगर बहुत-से लोगों में अभी तक दिल की लगन नज़र नहीं आती। कुफ़्र और बुराइयों की गर्मबाज़ारी और खुदा के दीन की बेबसी देखकर एक मोमिन के दिल में जो आग लगनी चाहिए उसकी तपिश कम ही लोगों में पाई जाती है। इसपर आपके अन्दर कम से कम इतनी बेचैनी तो ज़रूर हो जितनी अपने बच्चों को बीमार देखकर, या अपने घर में आग लगने का ख़तरा महसूस करके होती है। यह मामला भी ऐसा नहीं है जिसमें कोई शख़्स किसी दूसरे शख़्स के लिए सरगरमी और लगन की हद मुक़र्रर कर सकता हो। इसका फ़ैसला तो हर शख़्स को अपने दिल का जाइज़ा लेकर खुद ही करना चाहिए कि कितना कुछ काम करके वह यह समझने में हक़ बजानिब हो सकता है कि हक़-परस्ती के तक़ाज़े उसने पूरे कर दिए हैं। अलबत्ता आपकी इबरत के लिए उन बातिल-परस्तों की सरगरमियों पर एक निगाह डाल लेना काफ़ी है जो दुनिया में किसी न किसी बातिल दीन को फैलाने में लगे हुए हैं और उसके लिए सिर-धड़ की बाज़ियाँ लगा रहे हैं।

मुख़ालिफ़तें

शर्मनाक नामुनासिब मुख़ालिफ़तें

अब मैं मुख़्तसर तौर पर कुछ उन मुख़लिफ़तों के बारे में कहूँगा जो हाल में जमाअत के ख़िलाफ़ बड़े पैमाने पर शुरू हुई हैं। जहाँ तक दलीलों के साथ और मुनासिब इख़तिलाफ़ का ताल्लुक़ है; जिसका मक़सद समझना और समझाना हो और जिसके पीछे नेक नीयती के साथ हक़-पसंदी काम कर रही हो, ऐसे इख़्तिलाफ़ को तो न हम ने कभी बुरा समझा है न इनशा-अल्लाह कभी बुरा समझेंगे। जब हमने खुद बार-बार इस तरह का इख़तिलाफ़ दूसरों से किया है तो आख़िर हम दूसरों के इख़तिलाफ़ के हक़ का इनकार कैसे कर सकते हैं? मगर अफ़सोस है कि हमारे मुख़ालिफ़ों में से बहुत कम लोगों ने इख़तिलाफ़ का यह तरीक़ा अपनाया है। उनकी बहुत बड़ी अकसरियत जिस तरीक़े से हमारी मुख़ालिफ़त कर रही है वह यह है कि वह हमपर झूठे इलज़ाम लगाती है, हमारी तरफ़ ग़लत बातें जोड़ती है। हमारी तहरीरों को तोड़-मरोड़कर उनको अपने मनमाने मानी पहनाती है और यह सब कुछ वह हमारी या लोगों की इस्लाह के लिए नहीं, बल्कि इसलिए करती है कि हमारे ख़िलाफ़ आम लोगों को बदगुमान करे और एक इस्लामी निज़ाम ग़ालिब करने की जो कोशिश हम कर रहे हैं उसे किसी तरह न चलने दे।

झूठ का यह तूफ़ान उठाने में मुख़्तलिफ़ गिरोह शामिल हैं। एक तरफ़ हुकूमत कर रही पार्टी के लीडर और ख़बरें लिखनेवाले हैं, जिन्हें पाकिस्तान में इस्लामी हुकूमत के क़याम की तहरीक पसंद नहीं है। दूसरी तरफ़ पश्चिम की बुराइयाँ और खुदा का इनकार करनेवाले व दुनिया-परस्त

लोग हैं, जिन्हें अपनी फ़िक्री व अमली आज़ादियों पर इस्लामी अक़ीदे और अख़लाक़ की पाबंदियाँ पसंद नहीं हैं। तीसरी तरफ़ कई गुमराह फ़िरक़े हैं, जिन्हें सख़्त अंदेशा है कि अगर यहाँ सही मानो में इस्लामी हुकूमत क़ायम हो गई तो उनके लिए अपनी गुमराहियाँ फैलाने का मौक़ा बाक़ी न रहेगा। चौथी तरफ़ साम्यवादी लोग हैं जो ख़ूब जानते हैं कि उनके रास्ते में अगर कोई सबसे बड़ी रुकावट है तो जमाअत इस्लामी हैं। इन सबकी मुख़ालिफ़त तो एक हद तक फ़ितरी चीज़ थी, न होती तो ताज्जुब की बात थी और सच्चाई को झूठ से दबाने की कोशिश करना उनके लिए कोई ग़लत बात न थी। उनसे तो इस अख़लाक़ और रवैए की उम्मीद ही थी, मगर जिस चीज़ का हमारी पूरी जमाअत को सदमा है, वह यह है कि इन मुख़ालिफ़त करनेवालों में कुछ देवबन्द और अहले हदीस के उलमा नज़र आ रहे हैं और ग़ज़ब यह है कि झूठ और फ़ितनापरदाज़ी के हथियार का इस्तेमाल करने में इन हज़रात ने अपने भटके हुए साथियों को भी मात कर दिया है। यह आख़िरी चोट हक़ीक़त में हमारे लिए बहुत ही तकलीफ़देह है, न इसलिए कि हमें कुछ इन हज़रात की ताक़त से अंदेशा है बल्कि सिर्फ़ इसलिए कि हम इन हज़रात को दीनदार और ख़ुदा-तरस समझते हैं और इन्हें इस रूप में देखने की हरगिज़ उम्मीद न रखते थे। हमारी तो यह तमन्ना थी कि ये इस्लामी इंक़िलाब लाने की कोशिश में आगे-आगे होते और हम उनका दामन थाम कर चलते। मगर अफ़सोस कि उन्होंने उन सफ़ों को पसंद किया जिनमें कम्यूनिस्ट और हदीस के इनकारी और क़ादियानी और पश्चिमी दुराचार के अलमबरदार कंधा से कंधा मिलाए हुए हमपर हमलावर हो रहे हैं। काश ये कुछ देर के लिए ठहरकर सोच लेते कि —

"अज़ कि गसिती व बा कि पैवस्ती !"

(किस से अलग हो रहे हैं और किस से जुड़ रहे हैं)

मुख़ालिफ़तों के जवाब में आप क्या करें?

बहरहाल अब जब कि कई तरफ़ से हमारी मुख़ालिफ़त इस रंग में हो रही है, मैं ज़रूरी समझता हूँ कि अपने रुफ़क़ा को इस बारे में भी कुछ हिदायतें दे दूँ।

इस बारे में मेरी पहली हिदायत यह है कि आप किसी भी हाल में मुश्तइल (उत्तेजित) न हों, अपनी ज़बान और मिज़ाज पर क़ाबू रखें और जब कभी इश्तेआल (गुस्से) की कैफ़ियत उभरती महसूस हो उसे शैतानी हरकत समझकर अल्लाह की पनाह माँगें। हक़ीक़त यही है कि इस काम को ख़राब करने के लिए शैतान ही यह चाल चल रहा हैं। वह एक तरफ़ हमारी मुख़ालिफ़त करनेवालों को जा-जाकर उकसाता है और उनसे ग़ैर मुनासिब व बेजा हमले कराता है और दूसरी तरफ़ हमें उकसाने की कोशिश करता है ताकि हम जवाब और जवाब के जवाब में उलझकर रह जाएँ और किसी तरह यह काम न कर पाएँ जो उसे सख़्त नागवार है। हमें उसकी इस चाल में न आना चाहिए।

दूसरी हिदायत यह है कि कुछ आलिमों से और उनके शागिर्दों और उनके अक़ीदतमंदों से चाहे आपको कितना ही दुख पहुँचे, आप उसे बस रंज और अफ़सोस तक महदूद रखें और नफ़रत तक हरगिज़ न पहुँचने दें। और वह ग़लती न करें जो इससे पहले लोग करते रहे हैं कि उन्होंने कुछ आलिमों की ज़ियादतियों पर बिगड़कर सभी आलिमों को बुरा-भला कहना शुरू कर दिया और फिर इस हद पर भी न रुके और खुद दीन के इल्म ही को मलामत और निन्दा का निशाना बना डाला। आपको याद रखना चाहिए कि आलिमों की अकसरियत खुदा के फ़ज़्लोकरम से हक़पसन्द और हक़परस्त है और उनमें से बेहतरीन लोग आपको मिले हैं और मिलते चले जा रहे हैं।

तीसरी हिदायत यह है कि आप मुदाफ़अत (बचाव) का काम मुझपर छोड़ दें और ख़ुद अपने काम में लगे रहें। मैं जिस हद तक ज़रूरी समझूँगा बचाव का काम ख़ुद करूँगा या जमाअत के ज़िम्मेदार लोगों से लूँगा। आपका काम बस यह है कि जब कोई झूठा इलज़ाम आपके सामने लाया जाए तो आप जमाअत के लिट्रेचर में से उसका जवाब निकालकर पेश कर दें। उसके बाद अगर कोई बहस में उलझे तो उसको सलाम कीजिए और अलग हो जाइए। जिसे रास्ता चलना हो उसके लिए बेहतरीन हिकमत यह है कि अगर रास्ते में किसी काँटे से उसका दामन उलझ जाए तो कुछ पल ठहरकर दामन छुड़ाने की कोशिश करे और जब वह छूटता न दिखाई पड़े तो रास्ता खोटा करने के बजाए दामन का वह हिस्सा फाड़कर काँटे के हवाले करे और आगे रवाना हो जाए।

चौथी हिदायत यह है कि सख़्त से सख़्त बेहूदा मुख़ालिफ़त के जवाब में भी आप अल्लाह की हदों से आगे न बढ़ें। हर लफ़्ज़ जो आपकी ज़बान या क़लम से निकले उसपर ख़ूब सोच लें कि वह हक़ के ख़िलाफ़ तो नहीं है और क्या आप उसका हिसाब ख़ुदा के यहाँ दे सकेंगे? आपकी मुख़ालिफ़त करनेवाले ख़ुदा से डरें चाहे न डरें, आपको हर हाल में उससे डरते रहना चाहिए।

पाँचवी हिदायत यह है कि इस मुख़ालिफ़त ने आपकी तहरीक के लिए बढ़ने और उभरने का जो एक ग़ैर-मामूली मौक़ा मुहैया कर दिया है उससे पूरा-पूरा फ़ायदा उठाइए। यह अल्लाह ने आपके ज़िक्र को बुलंद करने का सामान किया है, इससे घबराइए नहीं, बल्कि इससे काम लीजिए। अरब में इसी तरह के प्रोपगेंडे का तूफ़ान जब नबी (सल्ल०) के ख़िलाफ़ उठा तो अल्लाह ने आपको ख़ुशख़बरी दी थी कि **"र-फ़अना ल-क-ज़िकरक"** यानी हमने आपके ज़िक्र को बुलंद किया। हमें तो

शुक्रगुज़ार होना चाहिए कि इतने बड़े पैमाने पर मुफ़्त में हमारा इशतिहार दिया जा रहा है, जिसे हम बीस साल में भी अपने ज़रियों से न दे सकते थे। अब हमारा काम सिर्फ़ इतना रह गया है कि जहाँ-जहाँ हमारा ग़लत तआरुफ़ (परिचय) कराया गया है, वहाँ-वहाँ हम अपना सही तआरुफ़ करा दें। इसका अल्लाह ने चाहा तो दोहरा फ़ायदा होगा। जिस-जिसपर इस झूठे प्रोपगेंडे की हक़ीक़त खुल जाएगी, वह सिर्फ़ जमाअत इस्लामी का दीवाना ही न हो जाएगा, बल्कि साथ-साथ उसके दिल से उन लोगों की इज़्ज़त भी निकल जाएगी, जिनके झूठ और जिनकी हक़ की दुश्मनी का खुला सबूत वह आँखों से देख लेगा। शैतान की चाल को इसी लिए अल्लाह ने कमज़ोर फ़रमाया है कि वह अपने औलिया को ऐसे हथियार मुहैया करके देता है जो थोड़ी देर के लिए तो बड़े कारगर साबित होते हैं, मगर आख़िरकार खुद उसी शख़्स की शहे रग काट देते हैं जो उन्हें इस्तेमाल करता है।

आख़िरी हिदायत ख़ास तौर पर जमाअत के उन लोगों के लिए है जो आलिमों के तबक़े से ताल्लुक़ रखते हैं। उनका काम यह है कि उनमें से हर गिरोह के लोग अपने-अपने गिरोह के आलिमों को समझाएँ। वे अलग-अलग और इकट्ठा होकर उनसे मिलें भी और उनको ख़त भी लिखें। वे उनसे कहें कि ऐ हज़रात! आप यह जो कुछ कर रहे हैं उसके नतीजों पर भी आपने ग़ौर कर लिया है? इससे पहले कई मरहलों पर आपके और नई पढ़ी-लिखी नस्लों के बीच जो कशमकशें हो चुकी हैं उनकी वजह से आपका वक़ार लगातार गिरता चला गया है और इससे आप ही के वक़ार को नहीं, खुद दीन के वक़ार को भी बहुत बड़ा सदमा पहुँचा है। अब जमाअत इस्लामी ने इनमें से बेहतरीन अनासिर (तत्वों) को चुन-चुनकर दीन की तरफ़ लाना शुरू किया था और दीनी रग़बत की वजह

से ये लोग आपसे बहुत क़रीब होने लगे थे, तो आपने उसके ख़िलाफ़ यह लड़ाई छेड़ दी और छेड़ी भी तो ऐसे भोंडे तरीक़े से कि नए पढ़े-लिखे लोग तो दूर, आपके अपने शागिर्दों तक के दिलों में आपकी अक़ीदत बाक़ी रहनी मुश्किल हो गई। इन हरकतों से आख़िर आप किस फ़ायदे की उम्मीद रखते हैं? और क्या आपने ख़ुदा के यहाँ इसकी जवाबदेही और इसका अंजाम भी सोच लिया है? अगर मान लिया जाए कि आपको जमाअत से कुछ बातों में इख़तिलाफ़ था तो क्या इस इख़तिलाफ़ को बातचीत या इल्मी बहस और तनक़ीद से दूर करने की कोशिश न की जा सकती थी? क्या वे मसले ऐसे ही अहम थे कि उनपर जमाअत के ख़िलाफ़ फ़तवे लगाने और इश्तिहार छापने और पम्फ़लेट निकालने के सिवा चारा न था? फिर अगर यह सब कुछ ज़रूरी था और आप सिर्फ़ दीन की हिमायत ही के जज़्बे से यह ख़ैर का काम करने उठे थे, तो क्या सही मानों में कोई शख़्स दीन की हिमायत की ख़ातिर सिर्फ़ अल्लाह को ख़ुश करने के लिए दूसरे की इबारतों को तोड़ा-मरोड़ा भी करता है? और जो कुछ उसने नहीं कहा वह अपनी तरफ़ से घड़कर उसकी तरफ़ जोड़ भी देता है? और उसकी अपनी तहरीरों से इलज़ामों की ग़लती साबित हो जाने के बाद भी अपने इलज़ाम पर इसरार (हठ) किया करता है? —

ये बातें हैं जो हमारी जमाअत के देवबंदी और मज़ाहिरी और अहले हदीस रुफ़क़ा को अपने-अपने गिरोह के बुज़ुर्गों से साफ़-साफ़ कहनी चाहिएँ। ख़ासकर मैं अपने देवबंदी और मज़ाहिरी भाइयों से कहूँगा कि देवबंद और मज़ाहिरुल-उलूम के बुज़ुर्गों ने इस भरोसे पर जमाअत के ख़िलाफ़ यह मुहिम शुरू की है कि हमारे दारुल-उलूमों से निकले हुए लोग हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में हर जगह फैले हुए हैं, जब हम अपने दस्तख़तों से फ़तवा और इश्तिहार शाया करेंगे तो सभी मज़ाहिरी और

देवबंदी आँखें बंद करके ख़ालिस उस्ताद-परस्ती और गिरोही असबियत (पक्षपात) की बिना पर हर तरफ़ से हमारी आवाज़ में आवज़ मिलानी शुरू कर देंगे। अब यह आप लोगों का काम है कि उनकी यह ग़लतफ़हमी दूर कर दें और उन्हें बता दें कि देवबंद व मज़ाहिरुल-उलूम से हमने क़ुरआन व हदीस का फ़ैज़ तो ज़रूर हासिल किया है, मगर ईमान निगलना नहीं सीखा।

आख़िर उस क़ुरआन और हदीस की तालीम का हासिल क्या जिससे आदमी हक़-परस्ती के बजाए उस्ताद-परस्ती और पीर-परस्ती सीखे और इस्लामी हमीयत और वफ़ादरी के बजाए गिरोही असबियत (पक्षपात) का सबक़ ले।

औरतों के लिए हिदायतें

अब तक जो कुछ मैंने कहा है उसका ज़्यादातर हिस्सा मर्दों और औरतों दोनों के लिए था। अब मैं ख़ास तौर पर कुछ बातें उन औरतों से करूँगा जो जमाअत के साथ जुड़ी हैं या उससे दिलचस्पी रखती हैं।

1. पहली ज़रूरत इस बात की है कि आप अपने दीन की ज़्यादा से ज़्यादा जानकारी हासिल करें। आप न सिर्फ़ कुरआन समझकर पढ़ें बल्कि कुछ न कुछ हदीस और फ़िक़्ह का भी मुताला करें, इसी तरह आप न सिर्फ़ दीन की बुनियादी बातों और ईमान के तक़ाज़ों को जानें बल्कि यह भी मालूम करें कि आपकी निजी ज़िन्दगी, घरेलू ज़िन्दगी, ख़ानदान की ज़िन्दगी और आम सामाजिक ज़िन्दगी के बारे में दीन के क्या हुक्म हैं? दीनी हुक्मों से औरतों की आम नावाक़फ़ियत उन वजहों में से एक अहम वजह है जिनकी बदौलत मुसलमान घरों में ग़ैर शरई तरीक़े राइज हुए हैं, बल्कि जाहिलियत की रस्मों तक ने राह पा ली है। आपको सबसे पहले खुद अपनी इस कमी को दूर करने की तरफ़ ध्यान देना चाहिए।

2. दूसरा काम यह है कि आपको दीन का जो इल्म हासिल हो, उसके मुताबिक़ आप अपनी ज़िन्दगी को, अपने अख़लाक़ और सीरत को और अपने घर की ज़िन्दगी को ढालने की कोशिश करें। एक मुसलमान औरत में कैरेक्टर की यह मज़बूती होनी चाहिए कि वह जिस चीज़ को सही समझे उसपर सारे घर और सारे ख़ानदान की मुख़ालिफ़त और कशमकश के बावजूद डटी रहे और जिस चीज़ को ग़लत समझे उसे किसी के ज़ोर देने पर भी क़बूल न करे। माँ, बाप, शौहर और ख़ानदान

के दूसरे बुज़ुर्ग यक़ीनन इसके हक़दार हैं कि उनकी फ़रमाँबरदारी की जाए, उनका अदब और लिहाज़ किया जाए, उनके मुक़ाबले में न सरकशी की जाए और न अपनी चलाई जाए। मगर सबके हुक़ूक़, अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) के हुक़ूक़ के नीचे हैं, न कि उनके ऊपर। ख़ुदा और रसूल की नाफ़रमानी के रास्ते पर जो भी आपको चलाना चाहे, आप उसकी फ़रमाँबरदारी से साफ़ इनकार कर दें, चाहे वह बाप हो या शौहर। इस मामले में आप हरगिज़ किसी से न दबें, बल्कि उसका जो बुरा नतीजा आपकी दुनयवी ज़िन्दगी को बरबाद करता नज़र आए, उसको भी अल्लाह पर भरोसा करते हुए गवारा करने के लिए तैयार हो जाएँ। दीन पर चलने में आप जितनी मज़बूती दिखाएँगी, अल्लाह ने चाहा तो उतना ही आपके माहौल पर अच्छा असर पड़ेगा और बिगड़े घरों को ठीक करने का आपको मौक़ा मिलेगा। इसके मुक़ाबले में नामुनासिब और ग़ैर शरई मुतालबों के आगे जितना आप झुकेंगी, आपकी अपनी ज़िन्दगी भी इस्लाम की बरकतों से महरूम रहेगी और आप अपने आस-पास की सोसायटी को भी ईमान और अख़लाक़ की कमज़ोरी का एक बड़ा नमूना देंगी।

3. तीसरा काम आपके ज़िम्मे यह है कि तबलीग़ और इस्लाह के मामले में अपने घर के लोगों, अपने भाई-बहनों और अपने क़रीबी रिश्तेदारों की तरफ़ सबसे पहले और सबसे ज़्यादा ध्यान दें। जिन बहनों को अल्लाह ने औलाद दी है, उनके हाथ में तो मानो अल्लाह ने इमतिहान के वे पर्चे दे दिए हैं, जिनपर अगर वे कामयाबी के नम्बर न ले सकीं तो फिर दूसरा कोई पर्चा भी उनके उस नुक़्सान की भरपाई न कर सकेगा। उनकी इस तवज्जोह की हक़दार सबसे बढ़कर उनकी औलाद है जिसे दीन और दीनी अख़लाक़ की तरबियत देना उनकी ज़िम्मेदारी है। शादीशुदा औरतों का यह भी फ़र्ज़ है कि वे अपने शौहरों को सही और सीधा रास्ता

दिखाएँ और अगर वे सही रास्ते पर हों तो उसपर चलने में उनकी ज़्यादा से ज़्यादा मदद करें। एक लड़की अदब और एहतिराम की पूरी हदों को ध्यान में रखते हुए अपने बाप और अपनी माँ तक भी हक़ बात पहुँचा सकती है और कम से कम अच्छी किताबें तो उनको पढ़ने के लिए पेश कर ही सकती है।

4. चौथा काम जिसे आपको फ़र्ज़ समझते हुए पूरा करना चाहिए यह है कि जितना वक़्त भी आप अपनी घरेलू ज़िम्मेदारियों से बचा सकती हों, वह दूसरी औरतों तक दीन का इल्म पहुँचाने में लगा दें। छोटी लड़कियों को तालीम दीजिए, बड़ी उम्र की अनपढ़ लड़कियों को पढ़ाइए, पढ़ी-लिखी औरतों तक इस्लामी किताबें पहुँचाइए, औरतों के बाक़ायदा इज्तिमाआत कर-करके उनको दीन समझाइए या तक़रीर न कर सकती हों तो मुफ़ीद चीज़ें सुनाइए। ग़रज़ आप जिस-जिस तरह भी काम कर सकती हों, करें और जहाँ तक मुमकिन हो सके पूरी कोशिश करें कि आपकी जाननेवाली औरतों से जिहालत और जाहिलियत दूर हो।

5. पढ़ी-लिखी औरतों पर इस वक़्त एक और भी ज़िम्मेदारी आइद होती है जो एक लिहाज़ से अपनी अहमियत में दूसरे सभी कामों से बढ़कर है। वह यह कि इस वक़्त पश्चिमी देशों से मुतास्सिर औरतें आम मुसलमान औरतों को जिस गुमराही, बेहयाई और ज़ेहनी व अख़लाक़ी आवारगी की तरफ़ धकेल रही हैं, उसका पूरी ताक़त से मुक़ाबला किया जाए। यह काम सिर्फ़ मर्दों के लिए नहीं हो सकता। मर्द जब इस गुमराही की मुख़ालिफ़त करते हैं तो औरतों को यह कहकर बहकाया जाता है कि ये मर्द तुमको गुलाम रखने पर तुले हुए हैं। उनकी तो हमेशा से यही मरज़ी रही है कि औरतें चार दीवारियों में घुट-घुटकर मरती रहें और उन्हें आज़ादी की हवा न लगने पाए। इसलिए हमें इस फ़ितने को रोकने में औरतों की

मदद की सख़्त ज़रूरत है । ख़ुदा के फ़ज़्ल से हमारे देश में ऐसी शरीफ़ और ख़ुदा-परस्त औरतों की कमी नहीं है जो आला तालीमयाफ़्ता और बहुत पढ़ी-लिखी हैं और उन पश्चिमी तहज़ीब से मुतास्सिर औरतों से इल्म और ज़ेहानत और ज़बान व क़लम की ताक़त में किसी तरह कम नहीं हैं । अब यह उनका काम है कि आगे बढ़कर उनका मुँहतोड़ जवाब दें । वे उन्हें बताएँ कि मुसलमान औरत अल्लाह की तय की हुई हदों से बाहर क़दम निकालने के लिए हरगिज़ तैयार नहीं हैं । वे डंके की चोट पर कहें कि मुसलमान औरत उस तरक़्क़ी पर लानत भेजती है जिसे हासिल करने के लिए ख़ुदा और उसके रसूल (सल्ल॰) की तय की हुई हदें तोड़नी पड़ें । सिर्फ़ यही नहीं, बल्कि उनका यह काम भी है कि मुनज़्ज़म और संगठित होकर हर उस हक़ीक़ी ज़रूरत को, जिसकी ख़ातिर हदों को तोड़ना ज़रूरी कहा जाता है, इस्लामी हुदूद के अन्दर पूरा करके दिखाएँ, ताकि हर गुमराह करनेवाले और गुमराह करनेवाली का सदा के लिए मुँह बन्द हो जाए ।